*नवाचार और वृद्धि : वित्तीय क्षेत्र की भूमिका **

राकेश मोहन

'उत्पादकता की वृद्धि तेज करने के लिए माल और सेवाओं के संभावित उत्पादन में तदनुरूप तेजी लाना तथा नए उत्पादन को खरीदने के लिए उपलब्ध वास्तविक आय में तदनुरूप वृद्धि करना जरूरी है। समस्या यह है कि उत्पादन में तेजी आने पर संभावित कुल आपूर्ति की तुलना में कुल मांग में और भी अधिक वृद्धि होती है' - अलन ग्रीनस्पैन

'आपूर्ति पक्ष के भंडार में जो कुछ भी हो, कम तथा स्थिर मुद्रास्फीति देना - तथा ऐसा करने की अपेक्षा किया जाना - एक ऐसी बात है जो यह दर्शाती है कि मौद्रिक नीति धारणीय वृद्धि को किस प्रकार सर्वोत्तम अवसर दे सकती है' - जॉन विकर्स

एंट्रेप्रेनियरशिप डेवलपमेंट इन्स्टिट्यूट ऑफ इंडिया में भारती वार्षिक व्याख्यान देने के लिए आमंत्रित किए जाने पर मैं अत्यधिक सम्मानित महसूस कर रहा हूं। मैंने सोचा कि चूंकि मैं उद्यमशीलता के इस मंच से व्याख्यान दे रहा हूं अतः यह सर्वाधिक उचित होगा कि मैं ''नवाचार और वृद्धि'' के बारे में बोलूं। तथापि देश के केंद्रीय बैंक में होने के कारण मुझे ऐसे नवाचार और वृद्धि का पोषण करने में वित्तीय क्षेत्र की भूमिका के बारे में शायद ध्यान केंद्रित करना चाहिए। परंतु आप फिर भी यह पूछ सकते हैं कि एक केंद्रीय बैंकर नवाचार और उद्यमशीलता के बारे में क्या बता सकता है क्योंकि हम पेशे से गंभीर, बोर करने वाले तथा असाहसी हैं; हमारा प्रमुख कार्य वित्तीय स्थिरता प्रदान करना है।

नवाचार और वृद्धि का विषय केंद्रीय बैंकों के लिए बहुत ही केंद्रीय विषय है। मौद्रिक प्राधिकारियों की एक प्रमुख चिंता, वस्तुतः, प्राथमिक उद्देश्य कम तथा स्थिर मुद्रास्फीति प्राप्त करना है। कम मुद्रास्फीति प्राप्त करने के लिए आवश्यकता इस बात की है कि उच्च आर्थिक

* 28 मार्च 2008 को अहमदाबाद में एंट्रेप्रेनियरशिप डेवलपमेंट इन्स्टिट्यूट ऑफ इंडिया द्वारा आयोजित समारोह में डॉ. राकेश मोहन, उप गवर्नर, भारतीय रिज़र्व बैंक का भारती वार्षिक व्याख्यान। इस भाषण को तैयार करने में के. कनगसभापति, पार्थ रे तथा मुनीष कपूर की सहायता साभार स्वीकार की जाती है।

वृद्धि के माहौल में उत्पादकता वृद्धि में तेजी लायी जाए। उत्पादकता वृद्धि ऊंची होने पर, आय में धारणीय वृद्धि, जिससे मांग में धारणीय वृद्धि होती है, का प्रबंध कम मुद्रास्फीति के साथ किया जा सकता है। अतःउत्पादकता बढ़ाना केंद्रीय बैंकर के लिए काफी महत्व रखता है तथा उद्यमशीलता एवं नवाचार ही उत्पादकता में वृद्धि करते हैं।

मैं एक निजी बात जोड़ना चाहता हूं, अनुसंधान तथा विकास के संवर्धन में तथा इस प्रकार उत्पादकता के संवर्धन में काफी समय से मेरी अकादमिक रुचि रही है। वस्तुतः मैंने अपना पहला अकादमिक पत्र कृषि में अनुसंधान तथा विस्तार की उत्पादकता की माप के बारे में तैयार किया था। हाल में कुछ समय पहले, 1990 के दशक के मध्य में मास्ट्रिच स्थित युनाइटेड नेशन्स इन्स्टिट्यूट फॉर न्यू टेक्नोलॉजीज में यूरोपीय औद्योगिक तथा प्रौद्योगिकी नीति के बारे में कार्य किया था।अतः मुझे प्रसन्नता है कि आज मुझे भारत में नवाचार और वृद्धि पर बोलने का अवसर मिल रहा है।

भारत की आर्थिक वृद्धि में आई अत्यधिक तेजी तथा इसकी संभावित वृद्धि में अत्यंत रुचि के कारण आज मैं अपने भाषण में पहले भारत के दीर्घकालिक वृद्धि-निष्पादन के बारे में संक्षेप में विहगावलोकन करूंगा। उसके बाद मैं सफल नवाचार के लिए शर्तें निर्धारित करूंगा । भारतीय अर्थव्यवस्था में नवाचार की भूमिका का आकलन करने के लिए मैं वास्तविक जीडीपी वृद्धि में उत्पादकता लाभ के अनुमानित अंशदानों पर प्रकाश डालूंगा। उसके बाद मैं नवाचार और वृद्धि में अंशदान करने में वित्तीय क्षेत्र के सुधारों की भूमिका पर ध्यान केंद्रित करूंगा। अंत में मूल्य एवं वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करके धारणीय वृद्धि एवं नवाचार में मौद्रिक नीति की भूमिका के बारे में चर्चा करके अपनी बात समाप्त करूंगा।

भारत की वृद्धि संबंधी अनुभव: विहगावलोकन

हम उल्लेखनीय परिवर्तन तथा अत्यधिक दिलचस्प समय के दौर से गुजर रहे हैं। 1947 में आजादी मिलने की आधी सदी पहले पूरे भारतीय उप महाद्वीप में शायद ही कोई उल्लेखनीय आर्थिक वृद्धि हुई हो। हमने 1950 के दशक की 3-3.5 प्रतिशत वृद्धि से, 1980 के दशक में लगभग 5.5 प्रतिशत की वृद्धि तथा 1990 के दशक में 5.8 प्रतिशत की वृद्धि का लंबा सफर तय किया है और हाल ही में लगभग 8.5 प्रतिशत से अधिक की धारणीय वृद्धि तक पहुंच गए हैं (सारणी 1)। परंतु अधिक चकित करने वाली बात यह है कि यदि हम 1960-90 के तीस सालों के लिए जनसंख्या वृद्धि की दर 2.2 प्रतिशत से गिरकर 1990 के दशक में 1.8 प्रतिशत तथा और गिरकर हाल ही में 1.6 प्रतिशत को ध्यान में रखें तो यह पाएंगे कि प्रति व्यक्ति जीडीपी में काफी अधिक वृद्धि हुई है तथा वह 1950 के दशक के लगभग 1.6 प्रतिशत वार्षिक से अब लगभग 7 प्रतिशत वार्षिक हो गया है।

सारणी 1 : भारत में वृद्धि और मुद्रास्फीति - एक ऐतिहासिक रिकॉर्ड

(प्रतिशत)

अवधि (औसत)	जीडीपी वृद्धि दर	थोमूसू मुद्रास्फीति दर	प्रति व्यक्ति जीडीपी वृद्धि
1	2	3	4
1951-52 से 1959-60	3.6	1.2	1.6
1960-61 से 1969-70	4.0	6.4	1.7
1970-71 से 1979-80	2.9	9.0	0.6
1980-81 से 1990-91	5.6	8.2	3.3
1992-93 से 1999-00	6.3	7.2	4.2
2000-01 से 2006-07	6.9	5.1	5.3
2003-04 से 2006-07	8.6	4.9	7.1

स्रोत : रेड्डी (2007).

हाल के वर्षों में अब अनुभव की गई आर्थिक वृद्धि की ऐसी ऊंची दर को देखते हुए देश में प्रगति अब दृष्टिगोचर हो रही है। देश में सभी जगह वृद्धि स्वयं कई तरीके से दिखाई दे रही है: नवाचार तथा उद्यमशीलता दृष्टिगोचर हैं। सभी क्षेत्रों में उत्तेजक परिवर्तन हो रहे हैं। कृषि में भी, जिसमें अन्यथा पिछले दशक में कम वृद्धि दिखाई दी, बड़ी मात्रा में नवोन्मेष हो रहा है। आपको सिर्फ राष्ट्रीय नवोन्मेष संस्थान द्वारा किए गए प्रलेखीकरण की ओर देखने की जरूरत है, जो अहमदाबाद स्थित इंडियन इन्स्टिट्यूट ऑफ मैनेजमेंट नामक आपके पड़ोसी संस्थान पर आश्रित है। पिछले दो दशकों में सार्वजनिक नीति में हुए परिवर्तनों ने भारत की उद्यमशीलता की भावना को वस्तुत: मुक्त कर दिया है। समष्टि आर्थिक प्रबंधकों के रूप में हमारा कार्य यह है कि हम ऐसी उद्यमशीलता, नवोन्मेष तथा वृद्धि को समृद्ध करने के लिए समग्र वातावरण प्रदान करें।

ऐसा वातावरण किससे निर्मित होता है? कम तथा स्थिर मुद्रास्फीति आवश्यक है : ऊंची तथा असमान मुद्रास्फीति से जोखिम बढ़ता है तथा इस प्रकार वह नवोन्मेष एवं जोखिम उठाने का विरोधी है। निवेश तब तक नहीं किया जाता जब तक निवेश संबंधी माहौल के पोषण के लिए पर्याप्त ऋण प्रवाह की उपलब्धता द्वारा पोषित जोखिम पूंजी उपलब्ध न हो। साथ ही, उपलब्ध मुद्रा की लागत द्वारा जोखिम तथा उधार देने की अवसर लागत उपयुक्त रूप से प्रतिबिंबित होनी चाहिए। जोखिम का कम मूल्य आंकना अधिक जोखिम उठाने की ओर ले जाएगा तथा अतिमूल्यन विपरीत दिशा की ओर ले जाएगा। जोखिम लेने, नवोन्मेष करने एवं बढ़ने, भविष्य में विश्वास रखने के लिए लोगों के पास कम एवं स्थिर मुद्रास्फीति का माहौल होना चाहिए जो समग्र वित्तीय स्थिरता के रखरखाव द्वारा समर्थित हो। अंत में, वित्तीय संसाधनों की उपयुक्त आपूर्ति के लिए स्थिर वित्तीय संस्थाओं का होना जरूरी है। ऐसे समग्र वित्तीय वातावरण की मौजूदगी सुनिश्चित करना केंद्रीय बैंक एवं अन्य विनियामक संस्थाओं का कर्तव्य है।

आर्थिक सुधारों, पूंजी बाजार प्ररूपों, वित्तीय बाजारों सुधारों, बैंकिंग सुधारों तथा मौद्रिक नीति सुधारों की समग्र प्रक्रिया संयुक्त रूप से ऐसा वातावरण प्रदान कर रही है। यह सुनिश्चित करने की जरूरत है कि इस प्रकार का वृद्धि का वातावरण - कम एवं स्थिर मुद्रास्फीति तथा वित्तीय स्थिरता - वस्तुत: मध्यम से दीर्घ अवधि में बनाए रखा जाए ताकि भारत में उद्यमशीलता और फलफूल सके।

नवोन्मेष एवं वृद्धि की शर्तें

नवोन्मेष की बात करने वाले सबसे पहले आर्थिक विचारक जोसेफ शुंपीटर थे। उनकी परिभाषा के अनुसार इसमें विभिन्न विशिष्टताएं शामिल होती हैं। उत्पादन का नया तरीका लागू करना स्वभावत: कुछ नवोन्मेष होगा। हाल के वर्षों में भारतीय उद्योग में स्पष्टत: उत्पादन के कई नये तरीके आए हैं। दूसरे, नए बाजारों को खोलने के लिए भी विपणन संबंधी दृष्टिकोणों एवं तकनीकों में नवोन्मेष की जरूरत होती है। राष्ट्रीय अनुप्रयुक्त आर्थिक अनुसंधान परिषद द्वारा घरेलू बाजार सूचना सर्वेक्षणों में संगृहीत आंकड़े पर्याप्त रूप में यह बताते हैं कि 1980 के दशक के बाद के वर्षों से देश में नए बाजार किस प्रकार विकसित हुए हैं। तीसरे, कच्चे माल की आपूर्ति के नए संसाधनों के उपयोग में भी नवोन्मेष शामिल होता है। व्यापार में उदारीकरण के साथ विश्व में उपलब्ध सभी कच्चा माल और सामान अब उद्योग को उपलब्ध है, इस प्रकार उनकी खरीद एवं उपयोग में बड़ी मात्रा में नवोन्मेष हो रहा है। औद्योगिक संगठन के नए प्ररूपों में

नवोन्मेष की चौथी संभावना है। आर्थिक वातावरण में हो रहे समग्र परिवर्तनों को देखते हुए हम नियमित आधार पर औद्योगिक संगठन के नए प्ररूप भी देख रहे हैं। इस प्रकार, इन चारों दृष्टिकोणों से 1990 के दशक के प्रारंभ से भारत में नवोन्मेष की गति काफी अच्छी रही है।

राष्ट्रीय ज्ञान आयोग (2007) ने ''भारत में नवोन्मेष'' नामक अपनी हाल की रिपोर्ट में इसी रूप में नवोन्मेष की परिभाषा की है :

''यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी वाणिज्यिक कार्यकलाप में अलग-अलग मात्रा में मापने योग्य मूल्य वृद्धि की आयोजना और प्राप्ति की जाती है। यह प्रक्रिया ब्रेकथ्रू या वृद्धिशील हो सकती है तथा किसी कंपनी में व्यवस्थित रूप में अथवा अनियमित रूप में यह घटित हो सकती है; इसे निम्नलिखित द्वारा प्राप्त किया जा सकता है:

- नए अथवा सुधरे हुए माल या सेवाएं लागू करके और/अथवा

- नई या सुधरी हुई परिचालनात्मक प्रक्रियाएं कार्यान्वित करके और/अथवा

- नई या सुधरी हुई संगठनात्मक/प्रबंधात्मक प्रक्रियाएं कार्यान्वित करके।

इससे लागत कम करते हुए बाजार के हिस्से, प्रतिस्पर्धा तथा गुणवत्ता में सुधार लाया जा सकता है।''

शुंपीटर के अलावा अन्य लोगों ने विभिन्न प्रकार के नवोन्मेष जैसे व्यावसायिक मॉडल संबंधी नवोन्मेष, विपणन संबंधी नवोन्मेष, उत्पाद के डिज़ाइन तथा उत्पाद के मूल्यन में सुधार के बारे में चर्चा की है। यहां पुनः हम देश में बड़ी मात्रा में नवोन्मेष देख सकते हैं। संगठनात्मक नवोन्मेष के मामले में भारतीय व्यावसायिक संगठनों ने सभी प्रकार के नए व्यावसायिक मॉडलों में प्रवेश किया है - चाहे सपाट संगठन, क्षीण संगठन या पिरामिडी संगठन हो - तथा बदलते हुए व्यावसायिक वातावरण के अनुसार बातें बदलती रहती हैं। नई व्यावसायिक प्रथाएं भी लागू की जा रही हैं: उदाहरण के लिए कंपनियों के भीतर 360 डिग्री मूल्यांकन की प्रथा एक नई संकल्पना है तथा शायद श्रेणीबद्ध समाज के लिए यह नया है। दूसरे प्रकार का नवोन्मेष प्रक्रियात्मक नवोन्मेष है। भारतीय दवा उद्योग दवाओं में बड़ी मात्रा में प्रक्रियात्मक नवोन्मेष के लिए जाना जाता है। नए माल और सेवाओं के रूप में उत्पाद एवं सेवा संबंधी नवोन्मेष के एक अन्य क्षेत्र में अनेक भारतीय उदाहरण मिल सकते हैं। जहां तक आपूर्ति पक्ष के नवोन्मेष का संबंध है, सर्वोत्तम उदाहरण ग्रामीण क्षेत्र से विशेषतः कृषि क्षेत्र से मिलता है परंतु भारत में यह अभी भी शैशवावस्था में है।

ये सभी नवोन्मेष तभी होते हैं जब कुछ आवश्यकता हो। पुरानी कहावत कि ''आवश्यकता आविष्कार की जननी होती है '' स्पष्टतः सच है। भारत में समग्र आर्थिक सुधार प्रक्रिया ने नवोन्मेष की गति को तेज किया है। उदाहरण के लिए 1991 में उद्योगों में लाइसेंस समाप्त करने के बाद प्रतिस्पर्धा का नया युग शुरू हुआ जिसे पूरे दशक में निरंतर व्यापार उदारीकरण तथा टैरिफ में सुधार से बल मिला । इसके अलावा, विदेशी प्रत्यक्ष निवेश को मुक्त करने से न सिर्फ नयी प्रतिस्पर्धा आई अपितु देश में नयी तकनीक एवं प्रौद्योगिकी भी आई। इस प्रकार नयी प्रतिस्पर्धा का सामना करने के लिए विभिन्न रूपों में नवोन्मेष करने के लिए भारतीय उद्योग को मजबूर होना पड़ा।

वास्तविक क्षेत्र में हुए सभी नवोन्मेषों के लिए वित्तीय क्षेत्र में भी तदनुरूप नवोन्मेषों की जरूरत थी। अतः वास्तविक क्षेत्र में उत्पादों एवं सेवाओं में हुए नवोन्मेष आदर्श रूप में वित्तीय क्षेत्र के नवोन्मेषों के साथ चलते हैं। इसके अलावा, सशक्त सार्वजनिक नीतियां तथा अच्छे शासन की संरचनाएं इन दोनों गतिविधियों का पोषण करती हैं तथा उन्हें अविघटनात्मक एवं रचनात्मक तरीके से इस प्रकार निर्देशित करती हैं ताकि सकारात्मक वृद्धि की प्रक्रिया को बनाये रखा जा सके। वित्तीय नवोन्मेष में नयी वित्तीय सेवाओं और उत्पादों का विकास शामिल होता है। इन नए उत्पादों और सेवाओं तक पहुंच आसान होनी चाहिए। अतः वित्तीय फर्मों को अपनी सेवाओं तक पहुंच व्यापक बनाने के लिए नवोन्मेष करना होता है। गुरुतर वित्तीय समावेश आवश्यक है । व्यष्टि वित्त की व्याप्ति एक ऐसा तरीका है जिसके द्वारा वित्तीय समावेश प्राप्त करने का प्रयास किया जा रहा है।

नवोन्मेष में जोखिम शामिल होती है। यदि जोखिम का वित्तपोषण प्रभावी तरीके से करना है तो वित्तीय संस्थाओं के लिए यह आवश्यक है कि वे अपनी जोखिम प्रबंध प्रणाली में आमूलचूल सुधार लाएं। पहला, उपयुक्त जोखिम आकलन प्रणालियों को विकसित करना जरूरी है। यहां ऋण सूचना ब्यूरो का प्रस्तावित प्रारंभ भविष्य में काफी मददगार हो सकता है। दूसरा, जोखिम कम करने की प्रणालियों का विकास। तीसरा, उपयुक्त जोखिम आबंटन प्रक्रियाएं विकसित करनी होंगी ताकि वित्तीय संस्थाओं की दृष्टि से जोखिम का पर्याप्त रूप से वितरण किया जा सके। वित्तीय प्रणालियां अधिक बाजार-उन्मुख होने तथा ब्याज दरों की मूल्य की खोज अधिक सक्षम होने के साथ वित्तीय संस्थाओं को जोखिम का प्रबंधन और आबंटन करने के बेहतर उपाय मिल जाते हैं। वित्तीय नवोन्मेष के लिए वित्तीय प्रणालियों के कारगर विकास में काफी समय लगता है।

नवोन्मेष या तो आपूर्ति द्वारा प्रेरित होंगे अथवा मांग द्वारा चालित होंगे। आपूर्ति द्वारा चालित नवोन्मेष नए अनुसंधान एवं विकास कार्यकलापों से उत्पन्न होते हैं जिनसे नयी प्रौद्योगिकियां, नए उत्पाद तथा नई प्रक्रियाएं उत्पन्न होती हैं। मांग द्वारा चालित नवोन्मेष अनिवार्य रूप से नयी प्रतिस्पर्धा के दबाव से उत्पन्न होते हैं। वस्तुतः अनुसंधान तथा विकास स्वयं में मांग द्वारा प्रेरित होता है।

एक कारगर राष्ट्रीय नवोन्मेष प्रणाली की आवश्यकता है ताकि महसूस किए जा रहे दबावों के जवाब में नवोन्मेष निरंतर एवं कारगर आधार पर होते रहें। फर्मों के भीतर आंतरिक प्रक्रियाओं का पुनर्विन्यास करने के अलावा, अनुसंधान विकास एवं नवोन्मेष की संस्कृति का पोषण करनेवाले परस्पर समर्थक संगठनों के नेटवर्क के अस्तित्व की जरूरत है। अनुसंधान एवं विकास संस्थाओं का समर्थन मानक निर्धारक संगठनों, तकनीकी परामर्शियों तथा इस प्रकार की संस्थाओं द्वारा किया जाना है ताकि फर्मों के पास पर्याप्त तकनीकी समर्थन प्रणालियां हों। लघु और मध्यम फर्मों के लिए ऐसा समर्थक वातावरण बनाने हेतु क्लस्टरों तथा इंक्युबेटरों की भी जरूरत है।

नवोन्मेष के साथ क्रम और पूंजी दोनों आते हैं । नवोन्मेष के साथ नई मशीनों की स्थापना की जाती है जिनमें नई प्रौद्योगिकी शामिल होती है। उसी कीमत पर नई मशीन पुरानी मशीन से ज्यादा कार्य करती है। पिछले बीस वर्षों में नई सूचना प्रौद्योगिकी के योग से मशीन टूल में आई क्रांति विचारणीय विषय है। न्यूनतम मूल्यों पर मल्टीटास्क के साथ सेलफोन प्रौद्योगिकी में हो रही घटना एक और उदाहरण है। यात्रा करते समय भी बहुत सारे

कार्य अब सेलफोन पर किए जाते हैं। इस प्रकार बड़ी मात्रा में नवोन्मेष नई पूंजी में शामिल होता है तथा ये सभी परिवर्तन क्षमता और उत्पादकता को बढ़ाते हैं। इसी प्रकार मानव पूंजी के संदर्भ में नया प्रशिक्षित जनबल नया कौशल लेकर आता है। वे पुराने कम प्रशिक्षित श्रमिकों की तुलना में वही कार्य अधिक तेज गति से करते हैं। क्योंकि संगठनों द्वारा नए श्रमिक लाए जाते हैं अथवा मौजूदा श्रमिकों को प्रशिक्षण दिया जाता है, उनके द्वारा नवोन्मेष एवं उत्पादकता वृद्धि में तेजी लाए जाने की संभावना है।

नवोन्मेष एवं उत्पादकता वृद्धि का समर्थन करने वाली ऐसी सभी गतिविधियां केंद्रीय बैंकों के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं।

जहां यह नोट करना दिलचस्प है कि पिछले दशक में पूरे विश्व में उत्पादकता में वृद्धि हुई है तथा इस वृद्धि का कारण नया निवेश हो सकता है, वहीं बनायी रखी गई वृद्धि के लिए ऐसे सकारात्मक आघातों के निहितार्थों को समझने की जरूरत है। नई प्रौद्योगिकी के त्वरित पुनःस्थापन का तात्पर्य यह है कि नयी पूंजी के संचय में प्रौद्योगिकी प्रगति तीव्रतर गति से समाहित हो जाती है जो कि अन्यथा संभव नहीं होता। दूसरा, हाल का अनुसंधान यह दर्शाता है कि नयी प्रौद्योगिकी पूंजी की लागत के घटबढ़ के प्रति नयी प्रौद्योगिकी काफी संवेदनशील होती है। अधिक मूल्य के लचीलेपन तथा हाइटेक उपस्कर के गिरते मूल्य का योग भी निवेश में उछाल में अंशदान करता है। तीसरा, इन निवेशों का काफी बाहरी या स्पिल-ओवर प्रभाव पड़ता है। नयी प्रौद्योगिकी के प्रयोग से परिचालन व्यय को कम करने में मदद मिली है तथा उच्चतर उत्पादकता के फलस्वरूप श्रम लागतों में काफी स्थिरता आई है। भारत और चीन में नए कुशल श्रमिकों की उपलब्धता के साथ आउटसोर्सिंग के रूप में वैश्वीकरण ने पूरे विश्व में मुद्रास्फीति कम रखने में अंशदान किया है। मूल्यन संबंधी विवरण का प्रयोग करने में प्रतिस्पर्धा के प्रभाव के साथ इन गतिविधियों ने पिछले दशक में वैश्विक जीडीपी के विस्तारपरक चरण के दौरान मुद्रास्फीतिकारी दबावों पर नियंत्रण लाने में काफी मदद की है।

इस प्रक्रिया में, अपनी मांग के सृजन में आपूर्ति का नियम भी कार्य करता है। पहला, उत्पादकता वृद्धि के फलस्वरूप, वृद्धि की उच्चतर संभावना बनती है तथा बदले में इससे माल और सेवाओं की मांग और बढ़ती है। नये निवेशों पर प्रतिलाभ की वास्तविक दर में वृद्धि होती है तथा लाभ के अवसरों का फायदा उठाने के लिए पूंजी व्यय में वृद्धि होती है। रोजगार तथा आय के अवसरों के कारण उपभोक्ता मांग में भी वृद्धि होती है। पूंजी बाजार के मूल्यन में उछाल ऐसी उच्चतर लाभप्रदता को दर्शाती है। पूंजी बाजार में इस प्रकार की उछाल का धन प्रभाव उपभोक्ता और निवेश संबंधी मांग दोनों में और वृद्धि करती है।

उत्पादकता बढ़ने के साथ निवेश के दिए गए स्तरों पर समग्र वृद्धि में भी बढ़त होती है तथा उसका यह भी आशय है कि मुद्रास्फीतिकारी दबाव उत्पन्न किए बिना उच्चतर निवेशों के द्वारा अधिक उच्चतर वृद्धि बनायी रखी जा सकती है। इस प्रकार सबसे अच्छा यह होगा कि हम नवोन्मेष, उत्पादकता तथा वृद्धि को प्रोत्साहन दें जो मुद्रास्फीति पर बेहतर नियंत्रण रख सकती है। पिछले दस सालों में पूरी दुनिया में वस्तुतः यही हुआ। विश्व भर के केंद्रीय बैंक अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मुद्रास्फीति पर

नियंत्रण रखने के लिए विशेष तौर पर पिछले 10 से15 वर्षों में बहुत सफल रहने पर गर्व महसूस करते हैं। परंतु मौद्रिक नीति के जरिए हुई इस उपलब्धि के पीछे वह लाभ निहित है जो उत्पादकता में वृद्धि के साथ आया है। अमरीका में उत्पादकता में आए उछाल ने पिछले दशक में अमरीका में तथा विश्व के स्तर पर गैर-मुद्रास्फीतिकारी वृद्धि में काफी अंशदान किया है। केंद्रीय बैंकरों के दृष्टिकोण से यह महत्वपूर्ण है कि उसी अवधि में काफी मौद्रिक निभाव की उपस्थिति में मुद्रास्फीति में कमी आयी है। अमरीका में 1995-2000 के बीच उत्पादकता वृद्धि में आई अधिकांश तेजी का कारण प्रौद्योगिकी तथा उसके शोषण के लिए प्रबंधन संबंधी जानकारी में निवेश है (ओलिनर, सिचेल और स्टिरोह)।

इस प्रकार, अनुसंधान और विकास कार्य में निवेश के माध्यम से नवोन्मेषात्मक कार्यकलापों को उत्साहित करना केंद्रीय बैंकों की प्रमुख चिंता है। नवोन्मेष तथा उत्पादकता वृद्धि कम तथा स्थिर मुद्रास्फीति प्राप्त करने में अंशदान करती है और कम तथा स्थिर मुद्रास्फीति बदले में नवोन्मेष के लिए उपयुक्त वातावरण प्रदान करती है।

यद्यपि नवोन्मेष विशिष्ट तौर पर फर्मों अथवा अनुसंधान एवं विकास संगठनों के भीतर किया जाता है, तथापि ऐसे कार्यकलाप के फलने-फूलने के लिए यह जरूरी है कि उसमें समष्टि आर्थिक एवं वित्तीय स्थिरता दोनों हो।

सारांश में, नवोन्मेष एवं वृद्धि के लिए सकारात्मक समष्टि आर्थिक वातावरण, एक समर्थक वित्तीय प्रणाली तथा राष्ट्रीय नवोन्मेष प्रणालियों के माध्यम से नवोन्मेष पोषक वातावरण की जरूरत है।

अब कुछ ऐसे संकेत मिल रहे हैं कि विश्व भर में मुद्रास्फीति पुनः बढ़ सकती है। विशेष तौर पर अनाज़ तथा तेल सहित पण्यों की कीमतें बढ़ रही हैं। इसी तरह ऐसे संकेत हैं कि साथ ही वैश्विक वृद्धि में, विशेष तौर पर अमरीका में, कमी आ सकती है। क्या ऐसा इसलिए हो रहा है कि अमरीका में नवोन्मेष एवं उत्पादकता वृद्धि में कमी आ रही है? यू.के. में भी इसी प्रकार की प्रवृत्तियां दिखाई दे रही हैं। इस प्रकार वैश्विक संदर्भ में उत्पादकता वृद्धि के लिए दृष्टिकोण अपनाना केंद्रीय बैंकरों के लिए महत्वपूर्ण तथा काफी चिंता की बात है।

भारत का वृद्धि संबंधी अनुभव : नवोन्मेष एवं उत्पादकता की प्रवृत्तियां

मैंने इससे पहले स्वतंत्रता से भारत के व्यापक वृद्धि पथ की रूपरेखा तैयार की है। जब 1950, 1960 तथा विशेष रूप से 1970 के दशक में वृद्धि कम थी, उस समय नवोन्मेष बहुत कम था। अब जब वृद्धि की रफ्तार काफी उच्चतर है, चारों ओर काफी अधिक नवोन्मेष भी दिखाई दे रहा है। इसके वस्तुतः घटित होने के क्या साक्ष्य हैं? 1990 के दशक के मध्य में हुई वृद्धि में तेजी के विपरीत, इस बार वृद्धि काफी अधिक व्यापक आधार वाली है जो विनिर्माण तथा सेवा दोनों क्षेत्रों से प्राप्त काफी अंशदान द्वारा चालित है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि अतीत से भिन्न, कारक उत्पादकता में सुधार इस वृद्धि की गति का एक महत्वपूर्ण घटक है।

जहां देश में नवोन्मेष के फैलाव की व्यापक तसवीर प्राप्त करना कठिन है, समय-समय पर किए गए सर्वेक्षण नवोन्मेष के बारे में फर्मों द्वारा अधिकाधिक महत्व दिए जाने का अच्छा साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं। उत्पादकता

वृद्धि की मात्रा तथा भारतीय अर्थव्यवस्था में पूंजी के उपयोग की दक्षता के बारे में भी कुछ समष्टि अनुमान उपलब्ध हैं। मैं उन्हें यहां प्रस्तुत करता हूं।

राष्ट्रीय ज्ञान आयोग ने नवोन्मेष के स्वरूप, विभिन्न क्षेत्रों में फर्मों के बीच अंतर तथा भारत में वृद्धि के संचालन में नवोन्मेषों द्वारा अदा की गई भूमिका को समझने के लिए व्यापक भिन्नता वाले फर्मों का सर्वेक्षण किया। उक्त सर्वेक्षण में कुल 137 फर्मों - 58 बड़ी फर्मों तथा 79 छोटे और मझौले उद्यमों (एसएमई) - को शामिल किया गया है। सर्वेक्षण के परिणाम यह सुझाते हैं कि भारतीय व्यावसायिक माहौल में नवोन्मेष स्पष्टतः जारी है।

सर्वेक्षण में यह देखा गया कि बड़ी तथा छोटी दोनों प्रकार की फर्मों में निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में नवोन्मेष का महत्व है। फर्मों का मानना है कि राजस्व, लाभप्रदता, लागतों में कटौती तथा बाजार के हिस्से में हुई वृद्धि में बढ़ते हुए अनुपात का कारण नवोन्मेष हो सकता है। इस प्रकार नवोन्मेष में निवेश करना व्यवसाय की सफलता की आवश्यकता के रूप में देखा जा रहा है। अधिकांश नवोन्मेष वृद्धिशील होता है, हालांकि ब्रेक-थ्रू नवोन्मेष बिक्री, लाभप्रदता आदि में अधिक नाटकीय उछाल ला सकता है। जैसी कि आशा की जा सकती है, बड़ी फर्में ब्रेक-थ्रू नवोन्मेष कर सकती हैं, जबकि छोटी फर्में प्रतिरूपी तौर पर वृद्धिशील नवोन्मेष करती हैं।

नवोन्मेष के घटकों के बारे में किए गए हमारे पहले के वर्गीकरण के अनुरूप, सर्वेक्षण से पता चलता है कि नवोन्मेष नए प्रोडक्ट, उत्पादन की नयी विधियों, विपणन, कच्चे माल के नवोन्मेषी उपयोग, और इसी तरह के अन्य क्षेत्रों में अच्छी तरह से व्याप्त हैं। दिलचस्प बात यह है कि यद्यपि विनिर्माण फर्मों में नवोन्मेष की तीव्रता उच्चतर होती है, सेवा क्षेत्र की फर्मों में नवोन्मेष की तीव्रता संबंधी गति की रफ्तार उच्चतर होती है। इसके अलावा सेवा क्षेत्र की फर्मों के ''अत्यधिक नवोन्मेषी'' होने की अधिक संभावना होती है।

जहां तक नवोन्मेष की प्रक्रिया का संबंध है, जो फर्में अनुसंधान और विकास में सचेत होकर निवेश करती हैं उनका अनुसंधान और विकास संस्थाओं, विश्वविद्यालयों तथा सरकारी प्रयोगशालाओं के साथ बेहतर संपर्क और सहयोग रहता है और नवोन्मेष करने के बेहतर मौके मिलते हैं। इस प्रकार, ज्ञान उत्पादक संस्थाओं में सरकारी निवेश तथा निजी उद्यम के बीच गुरुतर संभावना वाली सहक्रिया रहती है। वस्तुतः कुशलता की कमी, नीरस शैक्षणिक पाठ्यक्रम तथा सरकारी एजेंसियों के साथ अपर्याप्त अंतःक्रिया नवोन्मेष के मार्ग में कुछ प्रमुख रुकावटें हैं। तदनुरूप फर्मों के भीतर नवोन्मेष के महत्व पर सर्वोच्च प्रबंधन द्वारा ध्यान दिया जाना आवश्यक है।

उक्त सर्वेक्षण परिणाम भारत में नवोन्मेष के बढ़ते हुए कार्यकलाप और जागरूकता तथा बढ़ती हुई प्रतिस्पर्धा के आर्थिक वातावरण में प्रतिस्पर्धा एवं उत्पादकता बढ़ाने में उनके बढ़ते हुए महत्व संबंधी पहले प्रस्तुत दृष्टिकोण की पुष्टि करते हैं। साथ ही परिणाम यह भी दर्शाते हैं कि जनबल की कुशलता सुधारने की आवश्यकता है।कुशल पेशेवरों की उभरती हुई मांग को पूरा करने के लिए देश के कई महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में दी जानेवाली शिक्षा की गुणवत्ता पर्याप्त नहीं है। शिक्षा के क्षेत्र में काफी विस्तार और सुधार की तत्काल आवश्यकता है। प्राथमिक माध्यमिक तथा तृतीयक सभी स्तरों पर शैक्षणिक सुविधा बढ़ाने की जरूरत है।

समष्टि साक्ष्य

ऊपर प्रस्तुत नवोन्मेष की बढ़ती हुई मान्यता तथा उत्पादन में उसके महत्व का सर्वेक्षण आधारित साक्ष्य अर्थव्यवस्थाव्यापी वृद्धि वियोजन अभ्यासों के रूप में समष्टि साक्ष्य द्वारा भी समर्थित है। इस बात का साक्ष्य है कि 1993 के बाद की अवधि में कारक उत्पादकता में सुधार की अगुवाई में भारत की वृद्धि में उछाल आया है। 1978-2004 की अवधि का अध्ययन करने वाले बोसवर्थ तथा कोलिन्स (2008) का निष्कर्ष है कि उनके नमूने के उत्तरवर्ती भाग में उत्पादकता वृद्धि में सुधार हुआ है (सारणी 2)। 1978-1993 तथा 1993-2004 की अवधि के बीच वार्षिक वास्तविक जीडीपी वृद्धि 2 प्रतिशत अंकों की थी; बोसवर्थ तथा कोलिन्स (अन्यत्र उद्धृत)के अनुमान के अनुसार यह उछाल उच्चतर पूंजीगत गहराई तथा उत्पादकता वृद्धि के बीच प्रायः समान रूप से वितरित था। बोसवर्थ तथा कोलिन्स (अन्यत्र उद्धृत) द्वारा कवर की गई नमूना अवधि वर्ष 2003-04 में समाप्त होती है, जबकि वास्तविक जीडीपी वृद्धि में तेजी बाद के वर्षों में आई है। उक्त अवधि में देशी बचत और निवेश में भी उछाल आया है। 2003-04 से वृद्धि में तेजी आने के साथ वास्तविक जीडीपी वृद्धि में आई तीव्रता में पूंजीगत गहराई और उत्पादकता के तुलनात्मक अंशदान का पता लगाने के लिए 2003-04 से आगे की अवधि के लिए वृद्धि लेखांकन विश्लेषण का ज्ञान करना दिलचस्प होगा: परंतु इसके लिए अब हमें कुछ और वर्षों की प्रतीक्षा करनी होगी।

विशेष तौर पर 1997 के वित्तीय संकट के बाद पूर्वी तथा दक्षिण-पूर्वी एशिया में वृद्धि के स्वरूप पर काफी मात्रा में शैक्षणिक चर्चा की गई है। एक राय यह उभरी है कि 1970 और 1980 के दशक में इस क्षेत्र द्वारा अनुभूत उच्च वृद्धि व्यापक पूंजी निवेश पर आधारित थी तथा यह भी कि कुछ अवधि के दौरान इन देशों में नवोन्मेष एवं उत्पादकता वृद्धि कम थी। यह चीन और भारत के काफी हाल के वृद्धि संबंधी अनुभवों से कुछ भिन्न है। चीन तथा भारत दोनों में उल्लेखनीय उत्पादकता वृद्धि के साथ वृद्धि हुई है (सारणी 2)। यह उल्लेखनीय है कि

सारणी 2 : वृद्धि के स्रोत : भारत, चीन और पूर्वी एशिया 1978-2004

		वृद्धि (प्रतिशत वार्षिक)			वृद्धि में अंशदान (प्रतिशत अंक)		
अवधि	देश/ क्षेत्र	उत्पादन	रोजगार	उत्पादन/ कामगार	भौतिक पूँजी	शिक्षा	कारक उत्पादकता
1	2	3	4	5	6	7	8
1978-2004	चीन	9.3	2.0	7.3	3.2	0.2	3.8
	भारत	5.4	2.0	3.3	1.3	0.4	1.6
1978-1993	चीन	8.9	2.5	6.4	2.5	0.2	3.6
	भारत	4.5	2.1	2.4	1.0	0.3	1.1
1993-2004	चीन	9.7	1.2	8.5	4.2	0.2	4.0
	भारत	6.5	1.9	4.6	1.8	0.4	2.3
1960-1980	पूर्वी	7.0	3.0	4.0	2.2	0.5	1.2
1980-2003	एशिया	6.1	2.4	3.7	2.2	0.5	0.9
1980-1993	(चीन को	7.3	2.7	4.6	2.6	0.6	1.4
1993-2003	छोड़कर)	4.5	2.0	2.5	1.8	0.5	0.3

स्रोत : बोसवर्थ और कोलिन्स (2008).

भारत के विपरीत चीन ने पूंजी निवेश में हुई वृद्धि काफी अधिक है, जबकि रोजगार में वृद्धि तुलनीय है। हम यह भी पाते हैं कि आर्थिक सुधार लागू करने के बाद 1990 के दशक में भारत में उत्पादकता वृद्धि की गति में सुधार हुआ है। वस्तुतः भारत पूंजी के उपयोग में काफी किफायत बरतता है, अतः 1990 के दशक के मध्य से भारत में उत्पादकता में वृद्धि अपेक्षाकृत अधिक है। उत्पादकता वृद्धि के संबंध में शेष एशिया का रिकार्ड उतना अच्छा नहीं है।

कार्य-निष्पादन में इस प्रकार के अंतर के कारणों का पता लगाना महत्वपूर्ण है। निश्चयात्मक उत्तर पाना कठिन है तथा इसके लिए अधिक सतर्कतापूर्ण अनुसंधान की जरूरत है। तथापि, संभवतः यह कहना सही है कि भारतीय वित्तीय क्षेत्र 1990 के दशक के शुरू तथा मध्य में किए गए वित्तीय क्षेत्र के सुधारों के बाद चीन तथा कुछ अन्य एशियाई देशों की तुलना में कम विकृत है। 1990 के दशक के मध्य के बाद पूंजी की लागत बाजार-संबद्ध हो गई। भारतीय उद्योग द्वारा इन उदीयमान बाजार संकेतों के प्रति सही प्रतिसाद व्यक्त किया गया प्रतीत होता है। 1990 के दशक के बाद, जब वास्तविक और सांकेतिक ब्याज दरों में वृद्धि हुई, ऋण ईक्विटी अनुपात कम हो गया। उत्पादकता में वृद्धि का होना प्रतीत होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि पूंजी का उपयोग काफी सावधानीपूर्वक किया गया है। अतः, हाल के वर्षों में भारतीय उद्योग के नवोन्मेष और उसकी उत्पादकता में हुई वृद्धि में वित्तीय क्षेत्र के सुधार एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते थे। पिछले दशक में भारतीय उद्योग स्पष्ट तौर पर कठिन कार्य कर रहा था तथा यह भी अब लगभग पिछले पांच वर्षों में बहुत अधिक लाभ वृद्धि के रूप में स्पष्ट है।

अनुकूल लक्षणों द्वारा हाल के वर्षों में लगातार उच्च वृद्धि प्राप्त करने में भारतीय उद्योग की मदद किए जाने के बावजूद, उत्पादकता की प्रवृत्तियों से संबंधित अनिश्चितताएं भारत में बड़ी चुनौती लाती हैं। पहले से उपलब्ध प्रौद्योगिकी को अपनाकर औद्योगीकरण के क्षेत्र में बाद में आनेवाले उत्पादकता में काफी मात्रा में स्थानीय नवोन्मेष और वृद्धि प्राप्त कर सकते हैं। प्रौद्योगिकी के स्तर में सुधार होने के साथ अनुसंधान तथा विकास के क्षेत्र में गुरुतर निवेश किया जाना है ताकि उपलब्ध प्रौद्योगिकी को अपनाया जा सके तथा नवोन्मेष के लिए अपेक्षित नयी प्रौद्योगिकी विकसित की जा सके। एक बार न्यून प्रौद्योगिकी के सफल होने की संभावना समाप्त होने के बाद नया निवेश किया जाना चाहिए अथवा उच्चतर सफलता पाने के लिए गुरुतर प्रयास किया जाना चाहिए। अतः भारतीय उद्योग को प्राप्त नवोन्मेष की दर बनाये रखने की जरूरत के प्रति अधिक जागरूक होना चाहिए। इसके लिए अधिक अनुसंधान तथा विकास संबंधी कार्यकलापों के साथ प्रशिक्षण एवं उच्चतर शिक्षा, पूंजी निवेश की ऊंची दरों के जरिए मानव पूंजी के स्तर में सुधार लाने के प्रति काफी ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है।

भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए उत्पादकता वृद्धि के क्षेत्रवार विश्लेषण की ओर आने पर, अनुमान यह सुझाते हैं कि सुधारोत्तर अवधि में उद्योग तथा सेवा दोनों क्षेत्रों में उत्पादकता संबंधी लाभ दर्ज किए गए (सारणी 3)। सेवा क्षेत्र, जिसकी उत्पादकता वृद्धि में उल्लेखनीय सुधार हुआ, की तुलना में उद्योग में अपेक्षाकृत कम सुधार हुआ, जो उपलब्ध ऊपरी व्यष्टि साक्ष्य के अनुरूप है। बोसवर्थ तथा कोलिन्स (अन्यत्र उद्धृत) के अनुमानों के अनुसार

1993 - 2004 की अवधि में सेवा क्षेत्र में प्रति कामगार उत्पादन में हुई वृद्धि के लगभग 70 प्रतिशत के लिए उत्पादकता संबंधी लाभ जिम्मेवार हैं, उसी अवधि में औद्योगिक क्षेत्र के प्रति कामगार उत्पादन में हुई वृद्धि के सिर्फ एक-तिहाई के लिए उत्पादकता संबंधी लाभ जिम्मेवार थे। औद्योगिक क्षेत्र में उत्पादकता में अपेक्षाकृत कम अंशदान नमूना अवधि के उत्तरार्ध में शायद कृषि क्षेत्र में मंदी को दर्शा सकते हैं।

सेवा क्षेत्र में उत्पादकता वृद्धि की उल्लेखनीय रूप से उच्चतर मात्रा का कारण यह तथ्य हो सकता है कि सेवाओं की सुपुर्दगी में उल्लेखनीय परिवर्तन आया है। सूचना प्रौद्योगिकी लागू करने से सेवा की सुपुर्दगी का स्वरूप बदल गया है। वित्तीय सेवाएं इस क्रांति का सर्वाधिक स्पष्ट उदाहरण हैं। वस्तुतः सूचना प्रौद्योगिकी का प्रयोग किए बिना वित्तीय सेवाओं की सुपुर्दगी की कल्पना करना मुश्किल है। अब पूंजी बाजारों में पूर्णतः इलेक्ट्रॉनिक प्लेटफार्म पर ट्रेडिंग होती है, जिससे पूरे देश में पूंजी बाजारों के प्रति पहुंच व्यापक बनाने में काफी मदद मिली है।अब व्यक्ति की भौगोलिक दूरी के बावजूद पूंजी बाजार के प्रति पहुंच सिद्धांत रूप में समान रूप से उपलब्ध है। मोबाइल बैंकिंग लागू करना अभी शुरू हुआ है, अब चूंकि देश में लगभग 300 मिलियन सेलफोन है, अतः इस प्रौद्योगिकी के आने पर हम बैंकिंग सेवाओं की सुपुर्दगी में व्यापक रूपांतरण की आशा कर सकते हैं। यात्रा संबंधी सेवाएं एक दूसरा ऐसा क्षेत्र है जहां सूचना प्रौद्योगिकी के उपयोग से सेवा सुपुर्दगी का प्ररूप बदल गया है। बिचौलियों को शामिल किए बिना घर में बैठकर आराम से हवाईजहाज, ट्रेन, बस और होटल की बुकिंग की जा सकती है।इससे भी लागत में काफी बचत हुई है, अतः उत्पादकता में वृद्धि हुई है। सरकारी सेवाओं की सुपुर्दगी ने भी असंख्य तरीके से सूचना प्रौद्योगिकी का लाभ उठाना शुरू कर दिया है जैसे

सारणी 3 : भारत में वृद्धि के स्रोत : क्षेत्रवार विश्लेषण, 1978-2004

		वृद्धि (प्रतिशत वार्षिक)			वृद्धि में अंशदान (प्रतिशत अंक)		
अवधि	क्षेत्र	उत्पादन	रोजगार	उत्पादन/ कामगार	भौतिक पूँजी	शिक्षा	कारक उत्पादकता
1	2	3	4	5	6	7	8
1978-2004	समग्र	5.4	2.0	3.3	1.3	0.4	1.6
	कृषि	2.5	1.1	1.4	0.4	0.3	0.8
	उद्योग	5.9	3.4	2.5	1.5	0.3	0.6
	सेवा	7.2	3.8	3.5	0.6	0.4	2.4
1978-1993	समग्र	4.5	2.1	2.4	1.0	0.3	1.1
	कृषि	2.7	1.4	1.3	0.2	0.2	1.0
	उद्योग	5.4	3.3	2.1	1.4	0.4	0.3
	सेवा	5.9	3.8	2.1	0.3	0.4	1.4
1993-2004	समग्र	6.5	1.9	4.6	1.8	0.4	2.3
	कृषि	2.2	0.7	1.5	0.7	0.3	0.5
	उद्योग	6.7	3.6	3.1	1.7	0.3	1.1
	सेवा	9.1	3.7	5.4	1.1	0.4	3.9

स्रोत : बोसवर्थ और कोलिन्स (2008).

जमीन की हक़दारी से बिल की अदायगी तक, सूचना के प्रकार तथा इसी प्रकार के अन्य क्षेत्र। इस प्रकार नवोन्मेष हमारे दैनिक जीवन में व्याप्त है।

देश भर के संदर्भ में भारत में संसाधनों के उपयोग में दक्षता समग्र अर्थव्यवस्था के वृद्धिशील पूंजी उत्पादन अनुपात में घटबढ़ से भी स्पष्ट दिखाई देती है। उक्त विश्लेषण स्पष्ट तौर पर यह संकेत करता है कि 1950 के दशक से भारत की निवेश दर में न सिर्फ निरंतर ऊपर की प्रवृत्ति बनी रही है , इस बात के भी साक्ष्य हैं कि पूंजी का उपयोग उत्पादक तरीके से किया गया है। 1970 के दशक को छोड़कर, वृद्धिशील पूंजी उत्पादन अनुपात लगभग 4 प्रतिशत बना हुआ है। कुछ ऐसे संकेत हैं कि पिछले साक्ष्य के अनुरूप सुधारोत्तर अवधि में देशी उत्पादकता में सुधार हुआ है। सारी देश की स्थिति की तुलना करने पर यह सूचित होता है कि भारत में वृद्धिशील पूंजी उत्पादन अनुपात सबसे कम है। 1980 के दशक से उक्त अवधि के संदर्भ में यह विशेष रूप से सही है (सारणी 4)। प्रतिस्पर्धा को बढ़ाने के उद्देश्य से किए गए विभिन्न सुधारोपायों का भारतीय अर्थव्यवस्था की उत्पादकता पर वांछित प्रभाव हुआ प्रतीत होता है।

इस प्रकार उक्त साक्ष्य स्पष्ट तौर पर यह दर्शाता है कि उल्लेखनीय उत्पादकता वृद्धि प्राप्त करने के लिए नवोन्मेष करने के साथ पूंजी के संचय के उचित प्रयोग द्वारा हाल के वर्षों में भारत ने अपनी वृद्धि प्राप्त कर ली है। सहायक समष्टि आर्थिक नीतिगत ढांचा, वित्तीय मध्यस्थता में आई गुरुतर दक्षता, जो पूंजी की लागत के संबंध में उपयुक्त संकेत प्रेषित करती है, ने वृद्धि के स्वरूप में अंशदान किया है। व्यापार तथा पूंजी प्रवाहों में हुई तीव्र वृद्धि में नीतिगत परिवर्तनों का भी अंशदान है तथा इससे नवोन्मेष और उत्पादकता में बनी हुई वृद्धि के लिए आवश्यक नयी प्रौद्योगिकियों तथा प्रबंधन प्रणालियों का प्रसार संभव हुआ है। इससे यह सांत्वना मिलती है कि उत्पादकता में सुधार को मध्यावधि में बनाए रखा जा सकता है।

नवोन्मेष एवं वृद्धि के संवर्धन में वित्तीय क्षेत्र के सुधारों की भूमिका

वित्तीय क्षेत्र के विकास में नवोन्मेष एवं वृद्धि के लिए प्रमुख मुद्दा यह है कि वित्तीय प्रणाली कितनी अच्छी तरह नए विचारों, नए उत्पादों तथा नए उद्यमियों का वित्तपोषण कर सकेगी। एक दमित वित्तीय प्रणाली में

सारणी 4 : वृद्धि निवेश और आइसीओआर - चुनिंदा देश

देश	1960 का दशक	1970s का दशक	1980s का दशक	1990s का दशक	2000-06
1	2	3	4	5	6
वास्तविक जीडीपी वृद्धि (प्रतिशत)					
ब्राजील	5.9	8.5	3.0	1.7	3.1
चीन	3.0	7.4	9.8	10.0	9.5
भारत	4.0	2.9	5.6	5.7	7.0
इंडोनेशिया	3.7	7.8	6.4	4.8	4.9
कोरिया	8.3	8.3	7.7	6.3	5.2
मेक्सिको	6.8	6.4	2.3	3.4	2.9
फिलीपीन्स	5.1	5.8	2.0	2.8	4.8
दक्षिण अफ्रीका	6.1	3.3	2.2	1.4	4.1
थाईलैंड	7.8	7.5	7.3	5.3	5.0
वास्तविक निवेश दर (जीडीपी का प्रतिशत)					
ब्राजील	15.3	18.1	16.4	16.9	15.8
चीन	23.7	35.9	37.4	40.1	41.4
भारत	16.9	19.4	20.2	23.3	28.1
इंडोनेशिया	8.9	17.9	29.6	33.1	22.7
कोरिया	12.8	21.0	27.4	35.6	29.4
मेक्सिको	25.9	26.2	20.1	20.4	22.1
फिलीपीन्स	19.9	23.3	21.6	22.9	20.7
दक्षिण अफ्रीका	16.0	20.0	17.8	14.9	17.2
थाईलैंड	26.8	31.5	30.2	36.4	22.6
आइसीओआर					
ब्राजील	2.6	2.1	5.5	9.9	5.1
चीन	7.9	4.8	3.8	4.0	4.3
भारत	4.3	6.6	3.6	4.1	4.0
इंडोनेशिया	2.4	2.3	4.6	6.9	4.7
कोरिया	1.5	2.5	3.6	5.7	5.7
मेक्सिको	3.8	4.1	8.8	6.0	7.6
फिलीपीन्स	3.9	4.0	10.7	8.2	4.3
दक्षिण अफ्रीका	2.6	6.2	8.0	10.7	4.2
थाईलैंड	3.4	4.2	4.1	6.9	4.5

स्रोत : विश्व विकास संकेतक : विश्व बैंक.

पर्याप्त जोखिम प्रबंध प्रणाली न होने तथा वित्तीय बाजारों में सीमित गहराई होने पर बैंक प्रतिरूपी तौर पर आश्रितों को निधि प्रदान करने में खुशी महसूस करते हैं तथा नए कारोबार तथा नए विचारों के लिए निधि प्रदान करने में बहुत कम रुचि दर्शाते हैं। वित्तीय प्रणाली विकसित होने पर बड़ी कंपनियां बाजार में सीधे प्रवेश कर सकती हैं और गैर-मध्यस्थता का उदय होता है। इस प्रकार वित्तपोषित करने के लिए बैंक के पास थोड़े से आश्रित होते हैं और इस प्रकार यह आशा की जा सकती है कि वे अधिकाधिक मात्रा में नयी परियोजनाओं, नए उद्यमियों और नए विचारों का वित्तपोषण करेंगे।

क्या भारत में ऐसा हुआ है? वित्तीय क्षेत्र के सुधारों ने बैंकिंग और पूंजी बाजार के लगभग सभी पहलुओं को समाविष्ट किया है । पूंजी बाजारों के विनियंत्रण और विस्तार से मध्यस्थतापूर्ण वित्तीय संसाधनों के बाजार में सुस्थापित, क्रेडिट रेटिंग-युक्त बड़ी आश्रित संस्थाओं के लिए पहुंच आसान हो जाना चाहिए था। बैंकिंग प्रणाली में किए गए सुधारों का उद्देश्य यह था कि निजी क्षेत्र के नए बैंकों को प्रवेश देकर तथा सरकारी क्षेत्र के बैंकों को परिचालनात्मक स्वायत्तता बढ़ाकर नयी प्रतिस्पर्धा लाकर गुरुतर दक्षता लायी जाए। सरकारी प्रतिभूति बाजार में, सुधार संबंधी उपायों का उद्देश्य यह है कि सरकारी प्रतिभूतियों की नीलामी करके तथा सक्षम ट्रेडिंग के लिए मूलभूत संरचना विकसित करके ब्याज दरों में बेहतर मूल्य की खोज की जाए। इसी तरह विदेशी मुद्रा बाजार में नए उत्पादों और नए खिलाड़ियों को लाने के साथ बाजार आधारित विनिमय दर युग के प्रति क्रमिक रूप से उन्मुख हुआ जा रहा है। साथ-साथ बाजार, प्रौद्योगिकी और विधिक मूलभूत संरचना के रूप में संस्थागत ढांचा खड़ा करने के लिए सजग होकर उपाय किए गए हैं।

इस प्रकार के विभिन्न उपायों के फलस्वरूप, कंपनी क्षेत्र के लिए निधियों की लागत बाजार संबद्ध हो गई है। व्यापार में उदारीकरण में आए सुधारों के साथ विदेशी निवेश में गुरुतर पहुंच से विनिर्माण निर्यातों तथा निर्यातों की आयात तीव्रता में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। इस प्रकार कंपनी क्षेत्र अंतर्राष्ट्रीय उत्पादों और कारक मूल्यों के प्रति अधिकाधिक खुला हो गया है। समग्र रूप से नरम ब्याज दर वातावरण में ब्याज दर में क्रमिक कटौती के साथ उत्पादों और कारकों के उक्त बाजार आधारित मूल्यन एवं कम ऋण ईक्विटी अनुपात के फलस्वरूप ब्याज के बहिर्वाह में कमी आई है। इसने बदले में संसाधनों के बेहतर आबंटनों एवं नई प्रौद्योगिकी के सक्षम उपयोग का संवर्धन किया है जो उनके लाभ एवं दक्षता संबंधी मानदंडों में प्रतिबिंबित हुआ है।

कंपनी कार्य-निष्पादन के रूप में क्या परिणाम सामने आया है? सभी महत्वपूर्ण मानदंडों यथा बिक्री, सकल लाभ, करोत्तर लाभ में 2002-03 से वृद्धि दर में उछाल दर्ज की गई है, इसका निहितार्थ यह है कि इस अवधि में कंपनी क्षेत्र में आर्थिक कार्यकलापों में बहुत अधिक सुधार हुआ है (सारणी 5)। वित्तपोषण के लिए बैंकों पर निर्भरता वस्तुतः कम हो गई है । कुल व्यय में ब्याज व्यय की मात्रा में अत्यधिक कमी आई है। उक्त सीमा तक कंपनी क्षेत्र ब्याज दरों में छोटे-मोटे घटबढ़ के प्रति असंवेदनशील हो सकता है।

कंपनी क्षेत्र में लाभ में उच्च वृद्धि यह सुझाती है कि प्रतिस्पर्धा अपर्याप्त है तथा नयी फर्मों के प्रवेश अथवा नयी फर्मों के प्रवेश का खतरा कम है। उत्पादन में वृद्धि मौजूदा फर्मों के विस्तार से हो रही है, न कि नई फर्मों के सृजन के माध्यम से । यह पैटर्न यह सुझाता है कि नई फर्मों को उचित जोखिम समायोजित दरों पर बैंकिंग

प्रणाली से निधियां आसानी से नहीं मिल रही हैं। यह आवश्यक है कि बैंकों को अपने जोखिम प्रबंधन में सतर्कता बरतनी चाहिए तथा यह कि प्रभारित ब्याज दर तथा उधार दी गई निधियों की मात्रा में आकलित जोखिम प्रतिबिंबित होनी चाहिए। अर्थव्यवस्था में देखी जा रही वृद्धि की ऊंची दरों की उपस्थिति में, क्या बैंक पर्याप्त रूप से समर्थन दे रहे हैं? इस संबंध में क्या साक्ष्य है?

पहला, बैंकों से निधीयन का पैटर्न यह दर्शाता है कि उसमें शहरी तथा महानगरी क्षेत्रों की प्रधानता है जिन्हें ऋण का एक बड़ा हिस्सा प्राप्त हो रहा है। वस्तुतः महानगरी क्षेत्रों का हिस्सा वर्तमान दशक में और बढ़ा है तथा साथ ही ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों के हिस्से में गिरावट आई है (सारणी 6)।

दूसरा, बैंकों द्वारा निधीयन का पैटर्न बड़ी फर्मों के प्रति झुकाव दर्शाता है। तथापि बैंकों के लिए समस्या यह है कि कंपनी क्षेत्र में लाभ में वृद्धि हाल के वर्षों में इतनी अधिक हुई है कि उन्हें बैंकों से उधार लेने की अधिक आवश्यकता नहीं है तथा कंपनियों के तुलनपत्रों में ऋण की चुकौती का हिस्सा निरंतर कम होता जा रहा है। वस्तुतः बैंक की निधियों के लिए बड़ी फर्मों की जरूरत में आई कमी को देखते हुए आश्रितों, बड़ी फर्मों को निधि प्रदान करने के लिए बैंकों के बीच बड़ी प्रतिस्पर्धा है,

सारणी 5 : कार्पोरेट वित्तीय कार्यनिष्पादन

मद	1990/91	1991/92 से 1996/97	1997/98 से 2002/03	2003/04 से 2006/07	2006-07 (अप्रैल-सितंबर)	2007-08 (अप्रैल-सितंबर)
1	2	3	4	5	6	7
वृद्धि दर (प्रतिशत)						
बिक्री	15.8	16.9	7.0	20.7	27.4	17.4
व्यय	15.1	16.6	7.4	19.7	25.6	16.9
मूल्यह्रास प्रावधान	10.1	16.6	12.9	10.2	16.1	15.1
सकल लाभ	27.8	18.2	3.6	30.9	39.8	28.1
ब्याज अदायगी	16.2	18.7	3.8	-0.6	20.8	10.1
करोत्तर लाभ	53.3	21.1	7.8	47.3	41.6	31.1
चुनिंदा अनुपात (प्रतिशत)						
बिक्री के प्रति सकल लाभ	11.2	12.4	10.6	12.7	15.6	16.9
बिक्री के प्रति करोत्तर लाभ	4.0	5.5	3.6	8.0	10.6	11.7
ब्याज व्याप्ति अनुपात (गुना)	1.9	2.1	1.8	5.2	7.1	8.4
बिक्री के प्रति ब्याज	5.8	6.0	6.0	2.6	2.2	2.0
सकल लाभ के प्रति ब्याज	51.6	48.5	56.6	21.0	14.1	11.9
कुल व्यय के प्रति ब्याज	5.8	6.0	6.0	2.8	2.5	2.3
ईक्विटी के प्रति ऋण	99.0	75.1	67.0	51.4	NA	NA
निधियों के कुल स्रोत के प्रति निधियों के आंतरिक स्रोत	35.8	30.6	50.4	50.9	NA	NA
कुल उधार के प्रति बैंक उधार	35.6	31.6	35.5	52.6	NA	NA

टिप्पणी : 1. 2005-06 तक के आंकड़े लेखा-परीक्षित तुलनपत्र पर आधारित हैं जबकि 2006-07 और 2007-08 के आंकड़े चुनिंदा गैर-सरकारी गैर-वित्तीय पब्लिक लिमिटेड कंपनियों के संक्षिप्त वित्तीय परिणामों पर आधारित हैं।

2. वृद्धि दरें कंपनियों के सामान्य सेट के लिए पिछले साल की तदनुरूप अवधि की तुलना में संदर्भाधीन अवधि के लिए स्तर में प्रतिशत परिवर्तन हैं।

स्रोत : 2007-08 की पहली छमाही में कंपनी वित्त तथा निजी कंपनी कारोबार क्षेत्र के कार्यनिष्पादन पर रिजर्व बैंक का अध्ययन (भा.रि.बैंक. बुलेटिन जनवरी 2008)।

जिसके कारण उनसे उगाही जानेवाली ब्याज दर घोषित बेंचमार्क मूल उधार दरों की तुलना में काफी कम हो गई है। कुछ मायने में यह एक उत्साहजनक संकेत है क्योंकि यदि बड़ी फर्मों से बैंकों को पर्याप्त आय नहीं मिलेगी तो नए उद्यमियों को ऋण देने के लिए वे इच्छुक होंगे। बड़ी फर्मों को उधार देने में वर्तमान में जो तरजीह दी जा रही थी उसका कारण शायद आश्रितों को ऋण देने में गुरुतर आराम की पुरानी बैंकिंग आदत है क्योंकि इस प्रकार का ऋण अधिक सुरक्षित और आसान होता है। वित्तपोषण के लिए नए उद्यमी, नए विचार, नए उत्पाद तथा नयी सेवाओं को खोजने में अधिक प्रयास तथा उसके लिए अधिक परिष्कृत जोखिम प्रबंध प्रणाली की जरूरत होती है। ऋण सूचना ब्यूरो तथा छोटे एवं मध्यम उद्यमियों के केंद्रीकृत साख रिकार्डों की उपलब्धता के अभाव में भी भारतीय बैंक बाधित हैं। अब इस समस्या का समाधान हो जाना चाहिए क्योंकि संसद ने ऋण सूचना कंपनी अधिनियम पारित कर दिया है। रिज़र्व बैंक ने इन कंपनियों के लिए इसका निर्देश भी जारी कर दिए हैं, अतः हम आशा कर सकते हैं कि निकट भविष्य में ऐसी नयी कंपनियां स्थापित की जा सकती हैं।

सारणी 6 : जनसंख्या समूहवार वाणिज्य बैंकों का बकाया ऋण

(कुल का प्रतिशत)

जनसंख्या समूह	मार्च 2001	मार्च 2005	मार्च 2006	मार्च 2007
1	2	3	4	5
ग्रामीण	10.1	9.2	8.4	7.9
अर्ध शहरी	11.5	11.3	10.0	9.7
शहरी	16.8	16.4	16.4	16.2
महानगरी	61.6	63.1	65.3	66.1
ज्ञापन :				
राशि (बिलियन रु.)				
अखिल भारत	5564	11578	15175	19496

स्रोत : भारतीय रिज़र्व बैंक.

इस बात के समर्थक साक्ष्य हैं कि नए कारोबारी उद्यमियों के प्रवेश में कठिनाइयां हैं। जब हम देशों के बीच कारोबार करने के संबंध में विश्व बैंक सर्वेक्षण की ओर देखते हैं, तो भारत का स्थान 120-130 के दायरे में काफी नीचे आता है। साथ ही, हम यह भी पाते हैं कि भारत में कंपनी क्षेत्र के लाभ के स्तर तथा लाभ में वृद्धि दोनों के स्तर पर भारत विश्व में सबसे ऊंचे स्थान पर है। दोनों कैसे सच हो सकते हैं : यह कि भारत में कारोबार करना अन्य देशों की तुलना में अधिक कठिन है, जबकि साथ ही भारतीय कार्पोरेट क्षेत्र ने पिछले 4-5 वर्षों में संभवत: अन्य किसी देश की तुलना में उच्चतर लाभ वृद्धि दर्शाया है। अधिक प्रवेश लागत इस स्पष्ट विरोधाभास का संभावित स्पष्टीकरण प्रतीत होता है: एक बार प्रवेश करने के बाद बढ़ना आसान है, परंतु पहली बार प्रवेश करना कठिन है। यह सुझाता है कि भारतीय वित्तीय प्रणाली अभी शायद नये विचारों और नये फर्मों के वित्तपोषण के लिए पर्याप्त रूप में तैयार नहीं है।

साथ ही, हाल के वर्षों में उच्च ऋण वृद्धि की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि लघु और मध्यम उद्यमों को ऋण का छोटा अंश मिलने की प्रवृत्ति जारी है, हालांकि पिछले कुछ वर्षों में इस प्रवृत्ति में कुछ बदलाव आया है। पुनश्च, यह आश्चर्य की बात है कि सभी खंडों के बीच लघु और मध्यम उद्यमों को ऋण की वृद्धि वस्तुत: सबसे कम कैसे है? वस्तुत: ऐसा घटित हुआ है कि बैंक कंपनी क्षेत्र को उधार देने से हटकर अनिवार्यत: व्यक्तियों और खुदरा क्षेत्र की ओर उन्मुख हुए हैं और मध्यम क्षेत्र अर्थात् लघु और मध्यम उद्यमों को उन्होंने अभी भी छोड़ रखा है। पुनश्च, बैंक व्यक्तियों और खुदरा क्षेत्र की ओर इसलिए उन्मुख हुए हैं क्योंकि ऐसे ऋणों के लिए उच्च गुणवत्ता वाली संपार्श्विक प्रतिभूतियां उपलब्ध हैं। वित्तीय प्रणाली द्वारा नवोन्मेष और वृद्धि

का पोषण किये जाने के लिए यह ज़रूरी है कि लेनदेन की लागत कम किये जाने के साथ जोखिम के आकलन की प्रथा में सुधार हो। ऋण के इतिहास और ऋण की सूचना की गुरुतर उपलब्धता से इस संबंध में मदद मिलेगी। इनसे वित्तीय प्रणाली में ऋण संबंधी सूचित निर्णय लेने की बेहतर क्षमता पैदा होगी। वित्तीय प्रणाली में किये जाने वाले और विकास से जोखिम को इस प्रकार कम करने में मदद मिलनी चाहिए ताकि उच्चतर से निम्नतर अलग जोखिम क्षमता वाले निवेशक निवेश के लिए उपयुक्त साधन पा सकें। मूलत: मुद्दा यह है कि अधिक जोखिम वाले ऋण से कम जोखिम वाले ऋण को अलग करने और उन्हें वित्तपोषित करने के उपयुक्त तरीकों का पता लगाने के लिए सूचित जोखिम प्रबंधन की व्यवस्था हो । सुधारों के साथ, हमें ऐसी संस्थाओं और प्रणालियों को विकसित करने के लिए कठिन कार्य करना होगा। जोखिम पूंजी को भी अपनी भूमिका निभानी होगी।

घरेलू वित्तीय प्रणाली को मजबूत बनाना विशेषत: पूंजी खाते में बाह्य क्षेत्र को खोलने की पूर्वापेक्षा है। इस संबंध में वित्तीय क्षेत्र का आवधिक मूल्यांकन महत्वपूर्ण है। ऐसे मूल्यांकन में ये शामिल हैं - प्रणाली में विभिन्न वित्तीय संस्थाओं के सापेक्षिक महत्व का आकलन, वैकल्पिक परिदृश्यों के भीतर आघातों के प्रति प्रणाली की संवेदनशीलता तथा वित्तीय सुदृढ़ता संकेतक। इनमें चलनिधि की गतिविधियों और नीतियों का मूल्यांकन, संकट प्रबंधन रूपरेखा, विनियमन और पर्यवेक्षी प्रथाएं भी शामिल हैं। दूसरे, जिस सीमा तक वित्तीय क्षेत्र के मानकों और कूटों का अनुपालन किया जाता है उसके मूल्यांकन से विनियमन और पारदर्शिता में मौजूद अंतरों की पहचान करना, वित्तीय प्रणाली की समग्र स्थिरता का मूल्यांकन करना और अंतरराष्ट्रीय बेंचमार्कों की तुलना में देश की प्रथाओं को मापना संभव हो जाएगा। लगभग पांच साल पहले भारत ने वित्तीय मानकों और कूटों का व्यापक स्वमूल्यांकन किया तथा सतत आधार पर इसकी समीक्षा की जा रही है। भारत आइएमएफ और विश्व बैंक द्वारा वित्तीय क्षेत्र के मूल्यांकन में भाग लेने वाले शुरू के देशों में से एक है तथा हाल ही में भारत सरकार ने वित्तीय क्षेत्र का व्यापक स्वमूल्यांकन करने के लिए रिज़र्व बैंक के परामर्श से एक समिति गठित की है।

मौद्रिक नीति की भूमिका

जहां तक मौद्रिक नीति की भूमिका का संबंध है, पिछले दशक में हमने क्या हासिल की है? नवोन्मेष, उद्यमशीलता और वृद्धि के पोषण में यह कहां तक सुसंगत है? वित्तीय क्षेत्र में बाजार में काफी गतिविधियां हुई हैं। अब हमारे पास बाजार संबद्ध लचीली ब्याज दरें, अधिक खुले विदेशी मुद्रा बाजार तथा बाजार संबद्ध लचीली विनिमय दरें हैं, हालांकि विदेशी मुद्रा बाजार में रिज़र्व बैंक का हस्तक्षेप बना हुआ है। हमारे पास ईक्विटी के लिए सक्रिय पूंजी बाजार भी है, हालांकि कार्पोरेट बांड बाजार अभी विकसित होना है। हमारे देश में बैंकिंग में प्रतिस्पर्धा बढ़ी है। इस प्रकार पिछले दशक में मौद्रिक और वित्तीय क्षेत्र में सक्रिय नीति अपनायी गई है, जिससे आर्थिक वृद्धि का संवर्धन हुआ है, वित्तीय स्थिरता के साथ कम मुद्रास्फीति बनी रही है।

भारत में, मौद्रिक नीति के दो उद्देश्य हैं - मूल्य स्थिरता और वृद्धि। हालांकि रिज़र्व बैंक सुनिश्चित मुद्रास्फीति दर का लक्ष्य बनाकर नहीं चलता, जैसाकि कुछ देश करते हैं, तथापि वर्तमान में मुद्रास्फीति दर को 5 प्रतिशत की ऊपरी सीमा में नियंत्रित करने तथा

मध्यावधि में इसे और कम करने का प्रयास करने का उद्देश्य है। मौजूदा समष्टिआर्थिक एवं मौद्रिक स्थितियों में मौद्रिक नीति के रुख का सापेक्षिक बल बदलता है: यथा 2007 के अधिकांश भाग में मुद्रास्फीति एक मुद्दा थी तथा आज भी उसकी चिंता बनी हुई है। इन चिंताओं का निष्कर्ष नीति दरों को क्रमिक रूप से सख्त बनाने और 2004 के उत्तरार्ध से आरक्षित नकदी निधि अनुपात में वृद्धि जैसे अतिरिक्त उपायों में प्रतिबिंबित होता है।

कम मुद्रास्फीति का माहौल बनाना, कम मुद्रास्फीति प्रत्याशा तथा वित्तीय स्थिरता बनाये रखने में आत्मविश्वास नवोन्मेष और वृद्धि के पोषण में मौद्रिक नीति का सर्वोत्तम अंशदान हो सकता है। उद्यमी काफी जोखिम उठाते हैं, जैसेकि उसके ऊपर यदि हम उच्चतर मुद्रास्फीति, मुद्रास्फीति में अधिक अस्थिरता और उच्चतर ब्याज दरों के रूप में समष्टि आर्थिक जोखिमों को जोड़ दें तो जोखिम की अवधारणा ऐसी होगी कि उद्यमशीलता, नवोन्मेष एवं निवेश प्रभावी तौर पर बाधित हो जाएंगे। इससे अनिवार्यत: निवेश की दरें कम हो जाएंगी तथा फलस्वरूप आर्थिक वृद्धि भी कम हो जाएगी। अत: उच्च वृद्धि की गति बनाये रखने के लिए यह मानना अत्यधिक महत्वपूर्ण होगा कि मुद्रास्फीति और मुद्रास्फीति की प्रत्याशा को सुनियंत्रित रखना सुनिश्चित करना मौद्रिक नीति का सर्वोत्तम अंशदान होगा।

इस बात का साक्ष्य है कि वित्तीय बाजारों के तथा समष्टिआर्थिक नीतियों के प्रचक्रीय व्यवहार ने वृद्धि को प्रोत्साहित नहीं किया है, वस्तुत: इनसे अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में बड़ी सीमा तक समन्वित विकासशील देशों में वृद्धि और उपभोग अस्थिरता में बढ़त हुई है। इस प्रकार वित्तीय और वास्तविक आर्थिक स्थिरता के लिए समष्टिआर्थिक नीतियों के दायरे में हाल के वर्षों में वृद्धि हुई है और वह बहु-उद्देशीय तथा उल्लेखनीय 'ट्रेड-ऑफ' वाला हो गया है। निवारक अथवा विवेकपूर्ण समष्टिआर्थिक और वित्तीय नीतियां, जिनका उद्देश्य ऊपरी चक्र की अवधि के दौरान सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्र के ऋणों के अतिरिक्त संचय को टालना है, मानक नीतिगत निर्धारण का अंग बन गई हैं।

नीतिगत चुनावों में वर्तमान में प्रतिचक्रीय राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों का मिश्रण शामिल होता है, जिसमें उपयुक्त विनिमय दर युग की प्रथा भी शामिल होती है और जो सक्रिय पूंजी खाता प्रबंधन द्वारा पुष्ट होता है जिससे अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में आयी अस्तव्यस्तता से उत्पन्न जोखिम में कमी आती है। ऐसे उपायों में वित्तीय क्षेत्र और विशेषत: बैंकिंग प्रणाली का पर्याप्त विवेकपूर्ण विनियमन भी शामिल होता है। इस प्रकार, अत्यधिक विस्तार के खतरे वाले क्षेत्रों में हुई अत्यधिक ऋण वृद्धि पर नियंत्रण रखने के लिए,उदाहरण के लिए, भूसंपदा जैसे कुछ क्षेत्रों को दिए गए उधार पर जोखिम भार बढ़ा दिया गया है।

हमें समग्र वित्तीय स्थिरता - मूल्य स्थिरता, कम मुद्रास्फीति, मुद्रास्फीति की कम प्रत्याशा, मुद्रास्फीति संबंधी कम अस्थिरता - सुनिश्चित करते हुए उपयुक्त बाह्य क्षेत्र प्रबंधन के साथ कुछ प्रतिचक्रीय मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों का अनुसरण करना होगा। सिर्फ इन्हीं स्थितियों में धारणीय रूप में निवेश, नवोन्मेष और वृद्धि को बनाए रखा जा सकता है। हमें यह सुनिश्चित करते रहना चाहिए कि मूल्य स्थिरता के साथ वृद्धि की गति को बनाए रखा जाए।

जहां भारत ने कुछ समय से देशों के बीच एक प्रकार की अधिकतम वृद्धि दर बनाए रखी है, पिछले तीन ते चार वर्षों में वृद्धि की गत्यात्मकता में नाटकीय परिवर्तन हुआ है तथा अर्थव्यवस्था लगभग 6 प्रतिशत की मध्यवर्ती वृद्धि दर से उछलकर 8 प्रतिशत से काफी अधिक उच्च वृद्धि दर के युग में प्रवेश कर जाएगी। आंतरिक संसाधन सृजन के उच्च स्तरों तथा बाह्य उधार तक पहुंच के बावजूद विभिन्न क्षेत्रों के बीच ऋण की मांग में भी काफी वृद्धि हुई जिससे निवेश की दर काफी बढ़कर नई ऊंचाई तक पहुंच गयी। उपभोक्ता एवं व्यवसाय संबंधी आत्मविश्वास में हो रही वृद्धि ने विदेशी निवेश को आकृष्ट किया है जिसके फलस्वरूप वित्तीय प्रणाली में चलनिधि की स्थितियां आसान हुई हैं। केंद्रीय बैंक को बढ़ी हुई चलनिधि, विशेषतः कुछ संवेदनशील क्षेत्रों यथा भू-संपदा और खुदरा में ऋण में पर्याप्त वृद्धि तथा पूंजी के आवकों में हो रही वृद्धि तथा फलस्वरूप उसके निष्प्रभावीकरण की जरूरतों के पेचीदे सेट की समस्या से निपटना था।

मुद्रास्फीति लक्ष्य को अपनाने वाली प्रमुख उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की एक दूसरे देशों के साथ तुलना यह दर्शाती है कि भारत में हुई वृद्धि सर्वाधिक वृद्धि में से एक है जबकि मुद्रास्फीति अपेक्षाकृत कम बनी हुई है (मोहन, 2007)। इस प्रकार, भारत में व्यष्टि आर्थिक प्रबंधन का हाल का रिकार्ड अनुकरणीय है तथा इसका अनुकरण मुद्रास्फीति का लक्ष्य निर्धारित करने वाली उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं द्वारा भी किया जा सकता है। अब मौद्रिक नीति के समक्ष मध्यावधि में मुद्रास्फीति को कम करके अंतर्राष्ट्रीय स्तरों तक लाने की चुनौती है, जबकि साथ ही उच्च वृद्धि की गति को तथा वित्तीय स्थिरता को बनाये रखना है।

2007-08 को समाप्त 5 वर्ष की अवधि में जीडीपी में हुई वास्तविक वृद्धि का औसत 8.7 प्रतिशत वार्षिक था। ऐसी आशा की जाती है कि लगभग 36-37 प्रतिशत की वर्तमान घरेलू निवेश दर से वृद्धि की चालू गति को बनाये रखने में मदद मिलेगी। भारतीय आर्थिक इतिहास में लगातार 5 वर्षों तक इस प्रकार की वृद्धि कभी भी नहीं हुई है, इस वृद्धि को मुद्रास्फीति कम तथा स्थिर रखते हुए और मुद्रास्फीतिकारी प्रत्याशाओं पर लगाम लगाते हुए प्राप्त किया गया है। उत्पादकता में वृद्धि के अलावा, व्यापारी उदारीकरण के लाभ, राजकोषीय समेकन तथा अधिक प्रभावी मौद्रिक नीति ने भी 1990 के दशक के मध्य से अपेक्षाकृत कम मुद्रास्फीति दर बनाये रखने में मदद की है। सापेक्षिक मूल्य समायोजन तथा कृषि एवं अन्य पण्य मूल्यों से उत्पन्न आपूर्ति संबंधी आघातों के कारण हेडलाइन मुद्रास्फीति दरों में उछाल (स्पाइक) और मौसमी गिरावट जारी रहेगी। तेल, अनाज और धातुओं जैसे वैश्विक पण्यों की कीमतों में व्यापक वृद्धि के कारण पिछले 2-3 वर्षों में ऐसे आघातों में स्पष्ट तौर पर वृद्धि हुई है। मुद्रास्फीति के 7-8 प्रतिशत के दीर्घावधि औसत से सफलतापूर्वक कम होकर अब 4-5 प्रतिशत रह जाने के कारण मुद्रास्फीति के प्रति समाज की सहनशीलता की दर में भी कमी आई है। संक्रमण के इस निर्णायक दौर में इस बात को स्वीकार करना महत्वपूर्ण है कि इसी प्रकार की विघटनकारी शक्तियों को दूर रखते हुए वर्तमान स्तरों पर वृद्धि को बनाये रखने के लिए मूल्य एवं वित्तीय स्थिरता बहुत महत्वपूर्ण हैं।

अब मैं अपनी बात समाप्त करता हूं।

नवोन्मेष एवं वृद्धि को प्रेरित करने के लिए मौद्रिक नीति की सुसंगतता स्पष्ट है। उद्यमी, निवेशक और नवोन्मेषक अपनी राय से अपने धन का निवेश करते समय काफी जोखिम उठाते हैं। अन्य जोखिमों के कम होने तथा मुद्रास्फीति के कम एवं स्थिर होने पर इस प्रकार के उद्यमितापूर्ण एवं नवोन्मेषी व्यवहार में उन्नति होती है और इस प्रकार जब ब्याज दरें कम एवं स्थिर रहती हैं, जब विनिमय दर में अस्थिरता नहीं होती है तथा जब पर्याप्त मात्रा में ऋण प्रवाह उपलब्ध होता है उस समय मुद्रास्फीति की प्रत्याशाएं नियंत्रित होती हैं। भारतीय मौद्रिक नीति ने इस लक्ष्य को प्राप्त किया है। इस दशक में वृद्धि, निवेश, उद्यमितापूर्ण कार्यकलाप तथा नवोन्मेष के रूप में जो परिणाम सामने आए हैं वे यह सुझाते हैं कि हमने वस्तुतः मौद्रिक नीति के उद्देश्यों को प्राप्त करने में कुछ सफलता हासिल की है जैसाकि स्पष्ट रूप से व्यक्त किया गया है।

संदर्भ

बोसवर्थ, बैरी और सुसन एम.कोलिन्स (2008), ''एकाउंटिंग फॉर ग्रोथः कंपेयरिंग चायना एण्ड इंडिया''।

कैम्पो, जे.एस. (2005) ''ए ब्रॉड व्यू ऑफ मैक्रोइकोनॉमिक स्टेबिलिटी'' डीईएसए वर्किंग पेपर सं.1.एसटी/ईएसए/2005/डीडब्ल्यूपी/1, संयुक्त राष्ट्र।

फर्ग्युसन, जूनियर रोगर डब्ल्यू (2000): ''टेक्नोलॉजी, मैक्रोइक्नॉमिक्स एण्ड मॉनिटरी पॉलिसी'', फेडरल रिज़र्व बोर्ड।

ग्रीनस्पैन, अलन (2001): ''मॉनिटरी पॉलिसी इन द फेस ऑफ अनसर्टेंटी'' कैटो जर्नल, खंड 21 सं.2 (फाल)।

लेवाइन आर. ''फाइनेन्स एण्ड ग्रोथः थियरी एण्ड एविडेंस '' एनबीईआर वर्किंग पेपर सं.10766, 2004।

मोहन, राकेश (2006), ''फाइनेन्सियल सेक्टर रिफॉर्म्स एण्ड मॉनिटरी पॉलिसी'' भारिबैं.बुलेटिन।

..... (2007), ''इंडियाज फाइनेन्सियल सेक्टर रिफॉर्म्सःफोस्टरिंग ग्रोथ व्हाइल कंटेनिंग रिस्क'', भारिबैं.बुलेटिन, नवम्बर।

..... (2008), ''द ग्रोथ रिकार्ड ऑफ द इंडियन इकॉनॉमी, 1950-2008ः ए स्टोरी ऑफ सस्टेंड सेविंग्स एण्ड इनवेस्टमेंट'', भारिबैं. बुलेटिन, मार्च।

राष्ट्रीय ज्ञान आयोग (2007) भारत में नवोन्मेष, राष्ट्रीय ज्ञान आयोग, भारत सरकार, जून।

राजन. आर. तथा एल.झिंगेल्स (2003), ''सेविंग कैपिटलिज्म फ्रॉम द कैपिटलिस्ट्सः अनलीशिंग द पॉवर ऑफ फाइनेन्सियल मार्केट्स टू क्रिएट वेल्थ एण्ड स्प्रेड अपॉरच्यूनिटी '' क्राउन बिज़नेस, न्यू यार्क।

विकर्स जोन (2000). ' मॉनिटरी पॉलिसी एण्ड द सप्लाई साइड' बैंक ऑफ इंग्लैंड बुलेटिन।